[2013] 4 एस.सी.आर. 25

सुंदर उर्फ सुंदरराजन

बनाम

राज्य, पुलिस निरीक्षक द्वारा

(2011 की आपराधिक अपील संख्या: 300-301)

5 फरवरी, 2013

[पी. सदाशिवम एवं जगदीश सिंह खेहर, न्यायमूर्तिगण]

भारतीय दंड संहिता, 1860 - धाराएँ 364ए, 302 और 201 - सात वर्षीय बालक का फिरौती के लिए व्यपहरण और हत्या - परिस्थितिजन्य साक्ष्य - अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा दोषसिद्धि और मृत्युदंड - अभिनिर्धारित: दोषसिद्धि और साथ ही सजा में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है - गवाहों द्वारा व्यपहरण और फिरौती की मांग सिद्ध हुई - व्यपहरण का तथ्य सिद्ध हो जाने पर, व्यपहरणकर्ता द्वारा अपहृत को मुक्त करने के प्रमाण प्रस्तुत कर अपने दायित्व का निर्वहन न करने की स्थिति में, परिणामी हत्या का अनुमान लगाया जाना उचित है - अभियुक्त अपनी अभिरक्षा से मृतक की रिहाई को सिद्ध करने में विफल रहा - इस प्रकार मामले की परिस्थितियों में, हत्या का आरोप भी सिद्ध होता है - विभिन्न गंभीरकारी परिस्थितियों और किसी भी शमनकारी परिस्थिति के अभाव को देखते हुए, मृत्युदंड दिया जाना न्यायोचित है - साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 106 - दंड/दंडादेश – मृत्युदंड।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 106 - सिद्ध करने का भार - उत्तरदायित्व का स्थानांतरण - व्यपहरण और हत्या के मामले में - अभिनिर्धारित: एक बार व्यपहरण का

तथ्य सिद्ध हो जाने पर, अपहृत व्यक्ति को अपनी अभिरक्षा से मुक्त करने को प्रमाणित करने का भार व्यपहरणकर्ता पर स्थानांतरित हो जाएगा।

अपीलकर्ता-अभियुक्त पर एक अन्य अभियुक्त के साथ मिलकर फिरौती के लिए 7 वर्षीय बालक का व्यपहरण करने और फिरौती न मिलने पर बच्चे की हत्या करने का मुकदमा चलाया गया। अभियोजन साक्षी 2 और 3 ने मृतक को अंतिम बार अपीलकर्ता-अभियुक्त के साथ देखा था। अभियोजन साक्षी-8 ने सशपथ बयान दिया कि अपीलकर्ता ने मृतक की माँ का मोबाइल नंबर प्राप्त करने के लिए उसे फोन किया था और उसके बाद उसने उसी नंबर पर फिरौती के लिए कॉल किया। परेड में दो गवाहों द्वारा अपीलकर्ता-अभियुक्त की पहचान भी की गई थी। विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता-अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 364ए, 302 और 201 के तहत दोषी ठहराया और मृत्युदंड की सजा सुनाई। एक अन्य अभियुक्त को बरी कर दिया गया। उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि की पुष्टि की और मृत्युदंड को भी बरकरार रखा। इसके परिणामस्वरूप वर्तमान अपील दायर की गई है।

अपीलों को खारिज करते हुए न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1. ठोस साक्ष्यों के माध्यम से अभियुक्त-अपीलकर्ता की पहचान उस व्यक्ति के रूप में की गई है, जिसने घटना की तिथि को मृतक के विद्यालय की वैन से उतरने पर उसे अपने साथ ले लिया था। अतः, अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा मृतक के व्यपहरण का तथ्य विधिवत रूप से स्थापित हो जाता है। [कंडिका 24] [46-जी-एच; 47-ए]

1.2. व्यपहरण का तथ्य सिद्ध हो जाने पर, अपहृत व्यक्ति की परिणामी हत्या का अनुमान लगाया जाना उचित है। एक बार जब यह प्रदर्शित हो जाता है कि संबंधित व्यक्ति का व्यपहरण किया गया है, तो यह स्थापित करने का भार व्यपहरणकर्ता पर आ जाएगा कि अपहृत व्यक्ति को उसकी अभिरक्षा से कैसे और कब मुक्त किया गया था। व्यपहरणकर्ता द्वारा प्रस्तुत ऐसे किसी भी प्रमाण के अभाव में, यह अनुमान लगाना स्वाभाविक होगा कि अपहृत

व्यक्ति तब तक व्यपहरणकर्ता की अभिरक्षा में रहा, जब तक कि उसे मार नहीं दिया गया। वर्तमान निष्कर्ष साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 से भी निकलता है। [कंडिका 26] [48-ए-सी]

1.3. वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हैं जिनके आधार पर अभियुक्त-अपीलकर्ता के हाथों मृतक की हत्या का तथ्य भी स्थापित हो जाता है। इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, यह विधिवत रूप से स्थापित हो चुका है कि मृतक का व्यपहरण अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा किया गया था; अभियुक्त-अपीलकर्ता अभिलेख पर ऐसी कोई भी सामग्री प्रस्तुत करने में विफल रहा जिससे उसकी अभिरक्षा से मृतक की रिहाई प्रदर्शित होती हो। साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 सिद्ध करने का भार उसी पर डालती है। अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा ऐसी किसी भी सामग्री को प्रस्तुत न किए जाने के अभाव में, यह स्वीकार किया जाना होगा कि मृतक की अभिरक्षा तब तक अभियुक्त-अपीलकर्ता के पास ही बनी रही, जब तक कि उसकी हत्या नहीं कर दी गई। अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा यह चरम कदम उठाने का हेतु/कारण यह था कि उसके द्वारा मांगी गई फिरौती का भुगतान नहीं किया गया था। [कंडिका 27] [48-जी-एच; 49-ए-बी]

1.4. अभियुक्त-अपीलकर्ता ने अभियोजन साक्षी-13 की उपस्थिति में एक इकबालिया बयान दिया था जिसमें उसने स्वीकार किया था कि उसने मृतक की गला घोंटकर हत्या कर दी थी, जिसके बाद उसके शव को एक बोरे में भरकर एक विशेष टैंक में फेंक दिया गया था। इसके पश्चात, अभियुक्त-अपीलकर्ता की निशानदेही पर ही उस टैंक से मृतक का शव बरामद किया गया था। शव उसी तरह एक बोरे में पाया गया था, जैसा कि अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा बताया गया था। अभियोजन साक्षी-12, चिकित्सक ने मृतक के शव की शवपरीक्षा के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि डूबने से पूर्व दम घुटने के कारण उसकी मृत्यु हुई थी। यह साक्ष्य स्पष्ट रूप से अभियुक्त-अपीलकर्ता को मृतक की हत्या के अपराधी के रूप में सिद्ध करता है।

इसके अतिरिक्त, अभियोजन साक्षी-13 के कथन से यह भी प्रकट हुआ कि मृतक का विद्यालय बस्ता, पुस्तकें और स्लेट अभियुक्त-अपीलकर्ता के निवास स्थान से बरामद किए गए थे। अभियोजन साक्षी-1 द्वारा इन वस्तुओं के मृतक से संबंधित होने की पुष्टि की गई थी। इस तथ्यात्मक और विधिक स्थिति के आलोक में, अभियोजन पक्ष ने न केवल मृतक के व्यपहरण को, बल्कि अभियुक्त-अपीलकर्ता के हाथों उसकी हत्या को भी स्थापित करने के लिए पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत की थी। [कंडिका 28] [49-सी-जी]

सुचा सिंह बनाम पंजाब राज्य 2001 (4) एस.सी.सी. 375: 2001 (2) एस.सी.आर. 644 - पर निर्भर किया गया।

शरद बिरधीचंद सारडा बनाम महाराष्ट्र राज्य 1984 (4) एस.सी.सी. 116: 1985 (1) एस.सी.आर. 88; *तन्वीबेन पंकज कुमार दिवेटिया बनाम गुजरात राज्य* 1997 (7) एस.सी.सी. 156: 1997 (1) पूरक एस.सी.आर. 96; - संदर्भित किए गए।

2. अभियुक्त-अपीलकर्ता दो ऐसे जघन्य अपराधों का दोषी है, जो एक-दूसरे से स्वतंत्र होते हुए भी मृत्युदंड का प्रावधान करते हैं। अभियुक्त ने 7 वर्षीय बालक की हत्या की। पक्षों के बीच कोई पूर्व शत्रुता नहीं थी। ऐसा कोई गंभीर और अचानक उकसावा भी नहीं था, जिसने अभियुक्त को एक निर्दोष बच्चे का जीवन लेने के लिए विवश किया हो। ऐसी परिस्थितियों में एक बच्चे की हत्या, इस मामले को अत्यधिक घोर अपराध की श्रेणी में लाती है। फिरौती का भुगतान न किए जाने के कारण, एक नाबालिग बच्चे की हत्या की गई। यह तथ्य प्रदर्शित करता है कि अभियुक्त के मन में मानव जीवन का कोई मूल्य नहीं था। यह उस अत्यधिक मानसिक विकृति को भी दर्शाता है जो मानवीय क्षमा के योग्य नहीं है। जिस रीति से बच्चे की हत्या की गई, और अभियुक्त द्वारा जो दृष्टिकोण और पद्धति अपनाई गई, वह अभियुक्त के व्यवहार में अत्यंत घृणित आपराधिक प्रवृत्तियों को प्रकट करती है। अभियुक्त का यह दृष्टिकोण उच्चतम स्तर की क्रूर मानसिकता को प्रकट करता है। उपर्युक्त

सभी गंभीरकारी परिस्थितियों पर इस तथ्य की पृष्ठभूमि में विचार किया जाना चाहिए कि हत्या किसी अजनबी की नहीं, बल्कि एक ऐसे बच्चे की की गई थी जिससे अभियुक्त परिचित था। अभियुक्त-अपीलकर्ता का यह आचरण इस मामले के तथ्यों को असामान्य और जघन्य श्रेणी में रखता है। फिरौती के लिए विशेष रूप से इसी बच्चे के व्यपहरण का चयन सुव्यवस्थित और सचेत रूप से प्रेरित था। इकलौते पुरुष बच्चे की जानबूझकर हत्या करने के मृतक के माता-पिता के लिए गंभीर परिणाम होते हैं। अपने इकलौते पुरुष बच्चे को खोने पर माता-पिता की पीड़ा अथाह है, जो परिवार के वंश को आगे बढ़ाता और जिससे उनके बुढ़ापे में सहारा बनने की अपेक्षा थी। पीड़ित पक्ष को पहुंचाई गई अत्यधिक पीड़ा निश्चित रूप से गंभीरकारी परिस्थितियों में वृद्धि करती है। उपर्युक्त गंभीरकारी परिस्थितियों के विपरीत, अभियुक्त द्वारा एक भी शमनकारी परिस्थिति की ओर संकेत नहीं किया गया। अतः, उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलकर्ता पर लगाए गए मृत्युदंड की पुष्टि की जाती है। [कंडिका 30 और 31] (63-बी-सी और डी-एच; 64-बी-एच)

विक्रम सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य 2010 (3) एस.सी.सी. 56: 2010 (2) एस.सी.आर. 22 - पर निर्भर किया गया।

हरेश मोहनदास राजपूत बनाम महाराष्ट्र राज्य 2011 (12) एस.सी.सी. 56: 2011 (14) एस.सी.आर. 921; *रामनरेश और अन्य बनाम छत्तीसगढ़ राज्य* 2012 (3) एस.सी.आर. 630: 2012 (4) एस.सी.सी. 257; *ब्रजेंद्र सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य* 2012 (4) एस.सी.सी. 289: 2012 (3) एस.सी.आर. 599 - संदर्भित किए गए।

नजीर संदर्भ:

1985 (1) एससीआर 88	संदर्भित	कंडिका 19
1997 (1) पूरक एससीआर 96	संदर्भित	कंडिका 19

2001 (2) एससीआर 644	**भरोसा किया गया**	**कंडिका 19, 26**
2011 (14) एससीआर 921	**संदर्भित**	**कंडिका 29**
2012 (4) एससीसी 257	**संदर्भित**	**कंडिका 29**
2012 (3) एससीआर 599	**संदर्भित**	**कंडिका 29**
2010 (2) एससीआर 22	**भरोसा किया गया**	**कंडिका 31**

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2011 की आपराधिक अपील संख्या 300-301 ।

मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा आर.टी. संख्या 2/2010 एवं आपराधिक अपील संख्या 525/2010 में दिनांक 30.09.2010 को पारित निर्णय एवं आदेश से उद्भूत।

अपीलकर्ता की ओर से: के.के. मणि, अभिषेक कृष्ण।

उत्तरदाता की ओर से: योगेश कन्ना, ए. संथा कुमारन, एस. थनंजयन।

न्यायालय का निर्णय **जगदीश सिंह खेहर** द्वारा सुनाया गया

जगदीश सिंह खेहर, न्यायमूर्ति 1. 27.7.2007 को 7 वर्षीय सुरेश, जो वृधाचालम तालुक के कराकुडल गांव में अपनी मां माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) के साथ रहता था, हमेशा की तरह सुबह लगभग 8 बजे वृधाचालम स्थित अपने विद्यालय जाने के लिए अपने घर से निकला। सुरेश वृधाचालम के शक्ति मैट्रिकुलेशन विद्यालय में कक्षा II का छात्र था। हर सुबह, वह उसी गांव के अन्य छात्रों के साथ, सुबह लगभग 8.00 बजे एक विद्यालय वैन से विद्यालय के लिए निकलता था। वही विद्यालय वैन उन्हें दोपहर में लगभग 4.30 बजे वापस ले आती थी। 27.7.2009 को सुरेश घर नहीं लौटा। उसकी मां माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) चिंतित हो गई और उसने पूछताछ की। उसने कमाली (अभियोजन साक्षी 2) और उसी गांव के एक अन्य छात्र से पूछताछ की, जो सुरेश के साथ उसी वैन में विद्यालय जाता था।

कमाली (अभियोजन साक्षी 2) ने माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को बताया कि जब 27.7.2009 को विद्यालय वैन कराकुडल गांव वापस आई, तो एक व्यक्ति मोटरसाइकिल के पास खड़ा इंतजार कर रहा था। उस व्यक्ति ने सुरेश को बताया कि उसकी माँ और दादी की तबीयत ठीक नहीं थी। कमाली (अभियोजन साक्षी 2) के अनुसार, उस व्यक्ति ने सुरेश से कहा कि उसे माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ने सुरेश को अस्पताल लाने के लिए कहा है। उपर्युक्त कथनों के आधार पर, सुरेश उस व्यक्ति के साथ उसकी मोटरसाइकिल पर चला गया। कमाली (अभियोजन साक्षी 2) से पूछताछ करने के बाद, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ने एक अन्य छात्रा मलाई से जानकारी माँगी, लेकिन उससे कोई सकारात्मक जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी। इसके बाद, उसे उसी गाँव के कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) द्वारा सूचित किया गया कि उसने 27.7.2009 को शाम लगभग 4.30 बजे सुरेश को शक्ति विद्यालय की वैन से उतरते देखा था। उसने उसे यह भी बताया कि मोटरसाइकिल के पास खड़े एक व्यक्ति ने सुरेश को आवाज दी थी और वह सुरेश को अपनी मोटरसाइकिल पर अपने साथ ले गया था। कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) ने माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को पुलिस के पास जाने की सलाह दी। तदनुसार, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) शिकायत दर्ज कराने के लिए पुलिस थाना कम्मापुरम पहुँची। उक्त शिकायत घटना की तारीख यानी 27.7.2009 को ही शाम 7 बजे दर्ज की गई थी। इसके आधार पर, भारतीय दंड संहिता की धारा 366 के तहत अपराध संख्या 106 वर्ष 2009 पंजीकृत किया गया।

2. उसी दिन, यानी 27.7.2009 को रात लगभग 9.30 बजे, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को उसके मोबाइल फोन पर एक कॉल प्राप्त हुई। कॉल करने वाले ने अपनी पहचान शंकर के रूप में बताई। कॉल करने वाले ने सुरेश की रिहाई के लिए 5 लाख रुपये की फिरौती की मांग की। उक्त कॉल प्राप्त होने के तुरंत बाद, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) पुनः कम्मापुरम पुलिस थाने की ओर भागी और थाना प्रभारी को उसे प्राप्त हुई कॉल के बारे में सूचित किया।

3. अन्वेषण अधिकारी ने वृधाचालम तालुका के कराकुडल गांव के तत्कालीन ग्राम प्रशासनिक अधिकारी कासीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) को वृधाचालम पुलिस थाने बुलाया। तहसीलदार से अनुमति लेने के बाद, कासीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) और उनके सहायक वृधाचालम गए। वहां से वे अभियुक्त के घर गए और कासीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) की उपस्थिति में दोनों अभियुक्तों को पकड़ लिया गया। कासीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) की उपस्थिति में ही अभियुक्तों ने इकबालिया बयान दिए, जिसके परिणामस्वरूप तीन मोबाइल फोन सेट बरामद हुए, जिनमें से दो में सिम कार्ड लगे थे। अभियुक्तों ने यह भी स्वीकार किया कि जब सुरेश की रिहाई के लिए फिरौती का भुगतान नहीं किया गया, तो उन्होंने उसकी गला घोंटकर हत्या कर दी थी। अभियुक्तों ने यह भी कबूल किया कि उन्होंने सुरेश के शव को एक बोरे में भरकर मीरनकुलम टैंक में फेंक दिया था। उपर्युक्त इकबालिया बयान के आधार पर, कासीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) की उपस्थिति में और अभियुक्त की निशानदेही पर, दमकल सेवा दल के कर्मियों द्वारा सुरेश का शव निकाला गया। सुरेश का शव एक बोरे में पाया गया, जिसे उपरोक्त टैंक से बाहर निकाला गया था। अभियुक्त ने पुलिस को अन्य बयान भी दिए, जिसके फलस्वरूप कासीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) की उपस्थिति में अभियुक्त के निवास स्थान से मृतक सुरेश का विद्यालय बस्ता, पुस्तकें और स्लेट बरामद किए गए।

4. अभियुक्त से बरामद मोबाइल फोनों से प्राप्त जानकारी के आधार पर किए गए अन्वेषण के दौरान, पुलिस ने सरस्वती (अभियोजन साक्षी 8) की पहचान की, जिसने पुष्टि की कि उसे 27.7.2009 को रात लगभग 9 बजे खुद को शंकर बताने वाले एक व्यक्ति का फोन आया था। उसने यह भी खुलासा किया कि फोन करने वाले ने उससे माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) के फोन नंबर के बारे में पूछताछ की थी। सरस्वती (अभियोजन साक्षी 8) ने फोन करने वाले से कुछ समय बाद फिर से फोन करने को कहा था। उसे शंकर का दोबारा फोन आया और उसने उसे माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) का मोबाइल फोन नंबर

उपलब्ध करा दिया। उपरोक्त जानकारी एकत्र होने के परिणामस्वरूप, अभियुक्तों पर भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क (फिरौती के लिए व्यपहरण), 302 (हत्या) और 201 (साक्ष्य गायब करने) के तहत आरोप लगाए गए। मामले का विचारण सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया, जिसके उपरांत अभियोजन पक्ष ने 19 अभियोजन साक्षियों का परीक्षण किया। अभियोजन पक्ष ने 18 प्रदर्शों और 10 भौतिक वस्तुओं पर भी भरोसा किया। अभियोजन साक्षियों के बयान दर्ज किए जाने के बाद, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत अभियुक्तों के बयान दर्ज किए गए। अवसर प्रदान किए जाने के बावजूद, अभियुक्तों ने अपने बचाव में कोई भी साक्षी प्रस्तुत नहीं किया।

5. विचारण की समाप्ति पर, सत्र न्यायाधीश, महिला न्यायालय, कडलूर द्वारा अभियुक्त-अपीलकर्ता सुंदर उर्फ सुंदरराजन को भारतीय दंड संहिता की धारा 364-क, 302 और 201 के तहत अपराधों के लिए दोषी पाया गया और दोषसिद्ध किया गया। पहले दो अपराधों के लिए, अभियुक्त-अपीलकर्ता को मृत्युदंड के साथ प्रत्येक के लिए 1,000 रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई गई। तीसरे अपराध के लिए, अभियुक्त-अपीलकर्ता को 7 वर्ष के सश्रम कारावास और 1,000 रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई गई। आर.टी. संख्या 2/2010 के माध्यम से, अभियुक्त-अपीलकर्ता पर अधिरोपित मृत्युदंड की पुष्टि के लिए मामला मद्रास उच्च न्यायालय (इसके बाद 'उच्च न्यायालय' के रूप में संदर्भित) के समक्ष रखा गया। उपरोक्त से स्वतंत्र होकर, अभियुक्त-अपीलकर्ता ने अपनी दोषसिद्धि के आदेश को चुनौती देने के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील संख्या 525/2010 दायर की। अपने दिनांक 30.9.2010 के संयुक्त निर्णय के माध्यम से, उच्च न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलकर्ता पर अधिरोपित मृत्युदंड की पुष्टि की और साथ ही सुंदर उर्फ सुंदरराजन द्वारा दायर अपील को खारिज कर दिया। इस प्रकार, सत्र न्यायाधीश, महिला न्यायालय, कडलूर द्वारा दिनांक 30.7.2010 को दिए गए निर्णय को अभियुक्त-अपीलकर्ता के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया।

6. सत्र न्यायालय ने अभियुक्त संख्या 2, बालई को बरी कर दिया। हमारे समक्ष यह विवाद का विषय नहीं है कि अभियोजन पक्ष ने बालई के बरी होने के विरुद्ध कोई अपील दायर करके उसे चुनौती नहीं दी थी। अतः यह स्पष्ट है कि सभी प्रयोजनों के लिए अभियुक्त संख्या 2 वर्तमान मामले से दोषमुक्त हो चुका है।

7. जहाँ तक वर्तमान विवाद का संबंध है, सभी साक्षियों के बयानों पर विचार करना आवश्यक नहीं है। यद्यपि अभियोजन पक्ष ने अपना मामला केवल परिस्थितिजन्य साक्ष्यों पर आधारित किया था, फिर भी अभियुक्त-अपीलकर्ता की ओर से प्रस्तुत तर्कों पर विचार करने के लिए कुछ साक्षियों के बयानों को संदर्भित करना आवश्यक होगा। तदनुसार, प्रासंगिक साक्षियों की गवाही का सारांश नीचे दिया जा रहा है।

8. माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) मृतक सुरेश की माँ थी। यह माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ही थी जिसने 27.7.2009 को कम्मापुरम पुलिस थाने में प्रथम सूचना प्राथमिकी दर्ज कराई थी। विचारण न्यायालय के समक्ष अपने बयान में उसने बताया कि उसके चार बच्चे थे—तीन बेटियाँ और एक बेटा। सुरेश उसका इकलौता बेटा था। उसने सशपथ बयान दिया कि वह वृधाचालम तालुक के कराकुडल गाँव में अपने घर के सभी घरेलू मामलों की देखभाल स्वयं कर रही थी, क्योंकि उसका पति परिवार की कमाई के लिए विदेश गया हुआ था। उसने पुष्टि की कि वह कृषि कार्य में भी लगी हुई थी। उसने यह भी बताया कि उसका बेटा सुरेश वृधाचालम के शक्ति मैट्रिकुलेशन विद्यालय में दूसरी कक्षा में पढ़ रहा था। वह विद्यालय वैन से विद्यालय जाया करता था और विद्यालय के अन्य बच्चों के साथ शाम लगभग 4.30 बजे वापस आता था। हमेशा की तरह, 27.7.2009 को वह सुबह लगभग 8.00 बजे विद्यालय वैन से विद्यालय गया था, लेकिन चूंकि वह शाम 4.30 बजे तक वापस नहीं लौटा, इसलिए वह उसे खोजने के लिए बाहर निकली। उसने उन अन्य छात्रों से पूछताछ की जो उसके बेटे के साथ उसी विद्यालय वैन में यात्रा करते थे। कमाली (अभियोजन साक्षी

2) ने उसे सूचित किया कि उसका बेटा सुरेश 27.7.2009 को उसी के साथ विद्यालय वैन से उतरा था। कमाली (अभियोजन साक्षी 2) ने उसे यह भी बताया कि जैसे ही सुरेश 27.7.2009 को विद्यालय वैन से उतरा, अभियुक्त-अपीलकर्ता ने, जो अपनी मोटरसाइकिल के पास नीम के पेड़ के नीचे खड़ा था, सुरेश को उसके नाम से पुकारा और उससे कहा कि उसकी माँ और दादी बीमार हैं, और उन्होंने उसे सुरेश को अपनी मोटरसाइकिल पर उनके पास लाने के लिए कहा है। कमाली (अभियोजन साक्षी 2) के अनुसार, उस व्यक्ति के कहने पर सुरेश उसकी मोटरसाइकिल पर बैठ गया और वह उसे ले गया। इसके बाद माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ने उसी विद्यालय वैन से यात्रा करने वाली एक अन्य छात्रा मलाई से पूछताछ की। हालाँकि, मलाई को सुरेश की उपस्थिति के बारे में कुछ याद नहीं था। अंततः, कराकुडल गाँव के ही निवासी कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) ने माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को बताया कि उसने सुरेश को विद्यालय वैन से उतरते और एक व्यक्ति द्वारा अपनी मोटरसाइकिल पर ले जाते हुए देखा था। कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) ने माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को मामले की जानकारी पुलिस को देने की सलाह दी। उपर्युक्त जानकारी के आधार पर, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ने सशपथ बयान दिया कि वह तुरंत कम्मापुरम पुलिस थाने गई और शाम 7.00 बजे प्रतिवेदन दर्ज करवाया। अपने गाँव लौटने पर, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ने दावा किया कि उसे रात लगभग 9.30 बजे अपने मोबाइल फोन पर एक कॉल प्राप्त हुई। उसके अनुसार, कॉल करने वाला अभियुक्त-अपीलकर्ता ही था। अभियुक्त-अपीलकर्ता ने उसके बेटे सुरेश की सुरक्षित रिहाई के लिए 5,00,000 रुपये की मांग की। उक्त फोन कॉल प्राप्त होने के परिणामस्वरूप, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ने सशपथ बयान दिया कि वह पुलिस को इस घटनाक्रम से अवगत कराने के लिए पुनः कम्मापुरम पुलिस थाने गई थी। माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) के अनुसार, पुलिस ने उसे 30.7.2009 को सूचित किया कि उसके बेटे का शव एक झील से बरामद किया गया है और उसे वृधाचालम अस्पताल लाया गया है। अपने बयान में उसने अपने बेटे सुरेश के कपड़ों,

जूतों, जुराबों और गले की टाई की पहचान करने की पुष्टि की। उसने उसके विद्यालय बैग की भी पहचान की जिस पर 'जयोथ' (JAYOTH) लिखा हुआ था। उसने उसकी पुस्तकों और हरे रंग की बीडिंग वाली काली स्लेट की भी अपने बेटे सुरेश की वस्तु के रूप में पहचान की। वृधाचालम अस्पताल में जब उसने अपने बेटे के शव को देखा, तो उसकी भी पहचान की। प्रतिपरीक्षा के दौरान उसने सशपथ बयान दिया कि वह कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) के पास नहीं गई थी, बल्कि जब कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) ने उसे रोते हुए देखा, तो वह स्वयं उसके पास आया था। जब उसने कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) को अपने बेटे के लापता होने के बारे में बताया, तो उसने उसे सूचित किया कि उसने उसके बेटे सुरेश को विद्यालय वैन से उतरते हुए देखा था, जिसके बाद सुरेश एक मोटरसाइकिल पर एक व्यक्ति के साथ चला गया था।

9. कमाली अभियोजन साक्षी-2 के रूप में विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुई। उसने बताया कि वह (अपने बयान के समय) शक्ति मैट्रिकुलेशन विद्यालय, वृधाचालम में छठी कक्षा में पढ़ रही थी। उसने पुष्टि की कि मृतक सुरेश उसका परिचित था। उसने सशपथ बयान दिया कि 27.7.2009 को वह विद्यालय वैन से अपने विद्यालय गई थी, जिसमें सुरेश सहित गाँव के अन्य बच्चे भी थे। उसने यह भी बताया कि वह सुरेश के साथ 27.7.2009 को दोपहर लगभग 3.00 बजे विद्यालय वैन से कराकुडल गाँव वापस आई थी। सुरेश अन्य बच्चों के साथ विद्यालय वैन से उतरा था। जब वैन गाँव पहुँची, तो उसने एक व्यक्ति को मोटरसाइकिल के पास खड़े देखा था। सुरेश के विद्यालय वैन से उतरने के बाद, उस व्यक्ति ने सुरेश को इशारा करके बुलाया। उसने सुरेश को सूचित किया कि उसकी माँ और दादी बीमार हैं, और सुरेश की माँ ने उसे सुरेश को अस्पताल लाने के लिए कहा है। उसने सशपथ बयान दिया कि जब वह अपने घर पहुँची, तो माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ने उससे अपने बेटे के ठिकाने के बारे में पूछताछ की थी। उसने उपर्युक्त वर्णित तथ्यात्मक स्थिति की जानकारी माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को दी थी। उसने यह भी बताया कि पुलिस द्वारा उससे

पूछताछ की गई थी, जिसके दौरान उसने पुलिस को सूचित किया था कि वह अभियुक्त को पहचान सकती है। उसने स्वीकार किया कि कडलूर केंद्रीय कारागार में न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा एक शिनाख्त परेड आयोजित की गई थी, जहाँ उसने अभियुक्त-अपीलकर्ता की पहचान उस व्यक्ति के रूप में की थी, जो 27.7.2009 को विद्यालय से लौटने पर सुरेश को मोटरसाइकिल पर ले गया था।

10. कुरिंजी सेलवन ने विचारण न्यायालय के समक्ष अभियोजन साक्षी-3 के रूप में सशपथ बयान दिया। उसने बताया कि माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1), कमाली (अभियोजन साक्षी 2) और साथ ही मृतक सुरेश उसके परिचित थे। उसने कहा कि 27.7.2009 को शाम लगभग 4.30 बजे जब वह अपनी मोटरसाइकिल से अपने धान के खेत की ओर जा रहा था, तो शक्ति विद्यालय की वैन ने नदी के रास्ते के कोने पर उसके गाँव के स्कूली बच्चों को उतारा था। उसने भी अपनी मोटरसाइकिल वहीं रोक दी थी। उसने अभियुक्त-अपीलकर्ता को नीम के पेड़ के पास एक मोटरसाइकिल के साथ खड़ा देखा था। उसने अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा पहने गए कपड़ों के प्रकार और रंग की पहचान की। उसने पुष्टि की कि अभियुक्त-अपीलकर्ता ने सुरेश को उसके नाम से पुकारा था, जिसके बाद सुरेश उसके पास गया था। उसने सशपथ बयान दिया कि उसने सुरेश को उस व्यक्ति द्वारा उसकी मोटरसाइकिल पर ले जाते हुए देखा था। उसने आगे बताया कि जब वह शाम लगभग 5.30 बजे अपने धान के खेत से लौट रहा था, तो उसने माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को रोते हुए देखा। जब उसने उससे पूछताछ की, तो उसने बताया कि उसका बेटा लापता है। कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) ने पुष्टि की कि उसने उसे सूचित किया था कि एक व्यक्ति उसके बेटे को मोटरसाइकिल पर ले गया है। उसने माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को पुलिस में प्रतिवेदन दर्ज कराने की भी सलाह दी। उसने आगे सशपथ बयान दिया कि 30.7.2009 को एक बच्चे का शव बरामद किया गया था और उसे सुबह लगभग 8.00 बजे इस बारे में सूचित किया गया था। शव को वुचिपुल्लैयार वायलापाडी गाँव के मीरनकुलम टैंक से बरामद किया गया

था। उपर्युक्त सूचना मिलने पर, वह मीरनकुलम टैंक की ओर बढ़े जहाँ उन्होंने इंस्पेक्टर के सामने सुरेश की पहचान की। उन्होंने आगे सशपथ बयान दिया कि न्यायिक दंडाधिकारी की उपस्थिति में कडलूर केंद्रीय कारागार में एक शिनाख्त परेड आयोजित की गई थी। उन्होंने पुष्टि की, कि उन्होंने अभियुक्त-अपीलकर्ता की पहचान उस व्यक्ति के रूप में की थी जिसने सुरेश को उस समय साथ लिया था, जब सुरेश 27.7.2009 को विद्यालय वैन से उतरा था। उन्होंने यह भी दावा किया, कि जब उन्हें दो मोटरसाइकिलें दिखाई गईं, तो उन्होंने उस मोटरसाइकिल की पहचान की थी, जिस पर अभियुक्त-अपीलकर्ता 27.7.2009 को सुरेश को ले गया था।

11. एम. संथानम का बयान अभियोजन साक्षी 6 के रूप में दर्ज किया गया था। उन्होंने पुष्टि की कि वह शक्ति मैट्रिकुलेशन विद्यालय के संवाददाता और प्रधानाचार्य थे। उन्होंने यह भी पुष्टि की कि सुरेश उनके विद्यालय में दूसरी कक्षा में पढ़ रहा था। उन्होंने पुष्टि की कि सुरेश 27.7.2009 को विद्यालय में उपस्थित हुआ था। उन्होंने उपस्थिति रजिस्टर पेश किया, जिसमें सुरेश की उपस्थिति विधिवत दर्ज थी।

12. सरस्वती (अभियोजन साक्षी 8) विचारण न्यायालय के समक्ष पेश हुईं और सशपथ बयान दिया, कि 27.7.2009 को रात लगभग 9.00 बजे उन्हें अपने मोबाइल फोन नंबर 9943020435 पर एक कॉल प्राप्त हुई थी। कॉल करने वाले ने अपनी पहचान शंकर के रूप में बताई और माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) का फोन नंबर मांगा। उन्होंने बताया कि उन्होंने कॉल करने वाले को थोड़ी देर बाद फोन करने के लिए कहा था, ताकि उस समय तक वह माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) का फोन नंबर प्राप्त कर सकें। तदनुसार, कॉल करने वाले ने फिर से उनके मोबाइल फोन पर बात की, जिसके बाद उन्होंने उसे माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) का फोन नंबर बता दिया।

13. ए. बशीर, न्यायिक दंडाधिकारी सं. 1, विचारण न्यायालय के समक्ष अभियोजन साक्षी 10 के रूप में पेश हुए। उन्होंने सशपत बयान दिया कि वह 25.8.2009 को पहचान परेड आयोजित करने के लिए कडलूर केंद्रिय कारागार गए थे। वह अपने कार्यालय सहायक को अपने साथ ले गए थे। उन्होंने पहचान परेड में भाग लेने के लिए अभियुक्त-अपीलकर्ता के समान सह-कैदियों का चयन किया था। उनके द्वारा चुने गए व्यक्ति समान ऊँचाई, वजन, रंग और दाढ़ी वाले थे। उनके द्वारा चुने गए इन आठ व्यक्तियों में से, कमाली (अभियोजन साक्षी 2) और कुरुंजी सेल्वन (अभियोजन साक्षी 3) दोनों ने तीन अलग-अलग संयोजनों में अभियुक्त-अपीलकर्ता की पहचान की थी।

14. वोडाफोन कंपनी के कानूनी अधिकारी के रूप में कार्यरत सुनील (अभियोजन साक्षी 11) ने विचारण न्यायालय के समक्ष अपने बयान के दौरान पुष्टि की, कि पुलिस निरीक्षक, वृद्धाचलम ने उनसे 25.7.2009 से 28.7.2009 तक की अवधि के लिए वोडाफोन सेल फोन नंबर 9946205961 और 9943020435 के विवरण प्रदान करने को कहा था। उन्होंने पुष्टि की कि उन्होंने उपर्युक्त विवरण कंप्यूटर से लिए थे और उन्हें पुलिस निरीक्षक को दिया था। उन्होंने पुष्टि की कि 27.7.2009 को रात 9.39 बजे तक सिम नंबर 9946205961 से तीन कॉल किए गए थे। उन्होंने यह भी पुष्टि की, कि फोन नंबर 9943020435 सरस्वती (अभियोजन साक्षी 3) के नाम पर था।

15. डॉ. कथिरवेल विचारण न्यायालय के समक्ष अभियोजन साक्षी 12 के रूप में पेश हुए। उन्होंने 30.7.2009 को सुरेश के शव का शवपरीक्षण किया था। मुर्दाघर में पुलिस कांस्टेबल द्वारा शव की पहचान की गई थी। उन्होंने दावा किया कि शरीर सड़ने की अवस्था में था। उनके विश्लेषण के अनुसार, बच्चे की मृत्यु शवपरीक्षा से 36 से 48 घंटे पहले हुई थी। उनके द्वारा दी गई राय के अनुसार, दम घुटना बच्चे की मृत्यु का कारण था। और यह कि, उनकी राय में, बच्चे की मृत्यु पानी में डूबने से पहले ही हो चुकी थी।

16. काशीनाथन (अभियोजन साक्षी 13), ग्राम प्रशासनिक अधिकारी, कारकुडल, ने विचारण न्यायालय के समक्ष पेश होते हुए पुष्टि की, कि वह अभियुक्त-अपीलकर्ता को जानते थे। उन्होंने सशपथ बयान दिया कि 30.7.2009 को, उन्हें शाम लगभग 4.30 बजे उनके निवास से पुलिस निरीक्षक, वृद्धाचलम द्वारा बुलाया गया था। इसके बाद, वह वृद्धाचलम पुलिस थाना गए थे। पुलिस निरीक्षक ने काशीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) को पुलिस साक्षी बनने के लिए कहा था, जिसके बाद, उन्होंने पुलिस साक्षी बनने के लिए तहसीलदार से अनुमति प्राप्त की थी। उन्हें एक पुलिस जीप में अभियुक्त-अपीलकर्ता के घर ले जाया गया। वे 30.7.3009 को सुबह 7.00 बजे उसके घर पहुँचे। जैसे ही अभियुक्त ने पुलिस जीप देखी, वे दोनों मौके से भाग गए। भागते समय, अभियुक्त-अपीलकर्ता गिर गया था, और उसके बाद, पुलिस कर्मियों ने उसे पकड़ लिया था। महिला कांस्टेबलों ने बालई (अभियुक्त-2) को पकड़ लिया था। अभियुक्त-अपीलकर्ता ने काशीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) की उपस्थिति में पुलिस के सामने एक इकबालिया बयान दिया था। अभियुक्त-अपीलकर्ता ने उसकी उपस्थिति में पुलिस निरीक्षक को तीन मोबाइल फोन सौंपे थे। उक्त फोन में से केवल दो में सिम कार्ड थे। अभियुक्त-अपीलकर्ता ने वह मोटरसाइकिल भी पेश की, जिस पर वह सुरेश को ले गया था, जब वह 27.7.2009 को कारकुडल गाँव में विद्यालय वैन से उतरा था। अभियुक्त-अपीलकर्ता ने उसकी उपस्थिति में अपने निवास से एक विद्यालय बैग भी पेश किया जिसमें एक स्लेट और दो किताबें थीं। काशीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) ने स्वीकार किया कि जब 30.7.2009 को अभियुक्त-अपीलकर्ता से उपर्युक्त वस्तुओं की बरामदगी की गई थी, तो उन्होंने "महजर" पर हस्ताक्षर किए थे। अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर, काशीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) ने स्वीकार किया, कि वह अन्य पुलिस कर्मियों के साथ पुलिस जीप में वायलापाडी गाँव के मीरनकुलम टैंक गए थे। जब बच्चे के शव वाला बोरा तालाब से निकाला गया, तो अभियुक्त-अपीलकर्ता ने उसकी पहचान सुरेश के रूप में की।

उन्होंने सुरेश के शव वाले बोरे की बरामदगी पर तैयार किए गए "महजर" पर भी हस्ताक्षर किए थे।

17. अन्य गवाहों के बयानों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है, सिवाय इस तथ्य के कि सुनील (अभियोजन साक्षी 11) द्वारा पेश किए गए कॉल विवरण दर्शाते हैं कि अभियुक्त-अपीलकर्ता से बरामद मोबाइल फोन से सरस्वती (अभियोजन साक्षी 8) को दो कॉल किए गए थे। उक्त कॉल क्रमशः रात 9.22 बजे और 9.25 बजे किए गए थे। कॉल विवरण आगे दर्शाते हैं कि उसी नंबर से रात 9.39 बजे माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को एक कॉल किया गया था।

18. उपर्युक्त मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर ही हम अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए मुद्दों को निर्धारित करने का प्रयास करेंगे।

19. मामले के गुण-दोष पर अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत एकमात्र तर्क यह था कि अभियोजन ने केवल पारिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर अपीलकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को सिद्ध करने का प्रयास किया था। यह इंगित करने का प्रयास किया गया, कि प्रत्यक्ष साक्ष्य की अनुपस्थिति में, जरा सी भी विसंगति, जो दो दृष्टिकोणों की संभावना को दर्शाती हो, संदेह के लाभ के आधार पर अभियुक्त को दोष से मुक्त कर देगी। अपीलकर्ता के खिलाफ भरोसा किए गए पारिस्थितिजन्य साक्ष्य पर विचार करने से पहले, विद्वान अधिवक्ता ने पारिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि दर्ज करने के लिए आवश्यक सबूत के मानक पर इस न्यायालय द्वारा घोषित कानूनी स्थिति की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। इस संबंध में, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने सबसे पहले *शरद बिरधीचंद शारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य,* (1984) 4 एससीसी 116 पर भरोसा जताया। यह इंगित किया गया था, कि वर्तमान निर्णय में इस न्यायालय ने सबूत के मानक के स्वर्णिम

सिद्धांत प्रतिपादित किए थे, जो परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर सिद्ध किए जाने वाले मामले में आवश्यक होते हैं। इस संबंध में निम्नलिखित टिप्पणियों पर भरोसा जताया गया:-

"152. इस निर्णय के सूक्ष्म विश्लेषण से पता चलेगा कि किसी अभियुक्त के विरुद्ध मामले को पूरी तरह से सिद्ध कहे जाने से पहले निम्नलिखित शर्तों का पूरा होना आवश्यक है:

(1) वे परिस्थितियाँ जिनसे दोष का निष्कर्ष निकाला जाना है, पूरी तरह से सिद्ध होनी चाहिए।

यहाँ यह ध्यान दिया जा सकता है कि इस न्यायालय ने संकेत दिया कि संबंधित परिस्थितियों को 'सिद्ध किया जाना ही चाहिए' न कि 'सिद्ध किया जा सकता है'। 'सिद्ध किया जा सकता है' और 'सिद्ध किया जाना ही चाहिए' के बीच न केवल व्याकरणिक बल्कि कानूनी अंतर भी है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा *शिवाजी साहेबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य*: 1973 आपराधिक एलजे 1783 में ठहराया गया था, जहाँ निम्नलिखित टिप्पणियाँ की गई थीं:

निश्चित रूप से, यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि किसी न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध करने से पहले अभियुक्त को दोषी होना ही चाहिए न कि केवल दोषी हो सकता है, और 'हो सकता है' तथा 'होना ही चाहिए' के बीच की मानसिक दूरी बहुत अधिक होती है और यह अस्पष्ट अटकलों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करती है।

(2) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त के दोष की परिकल्पना के साथ सुसंगत होने चाहिए, अर्थात, उन्हें अभियुक्त के दोषी होने के अलावा किसी अन्य परिकल्पना पर स्पष्ट नहीं किया जा सकता।

(3) परिस्थितियाँ निर्णायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिए।

(4) उन्हें सिद्ध की जाने वाली परिकल्पना के अलावा हर संभव परिकल्पना को अपवर्जित करना चाहिए, और

(5) साक्ष्य की एक ऐसी श्रृंखला होनी चाहिए जो इतनी पूर्ण हो कि अभियुक्त की बेगुनाही के साथ सुसंगत निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार न बचे और यह दिखाया जाना चाहिए कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह कृत्य निश्चित रूप से अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा।

153. ये पाँच स्वर्णिम सिद्धांत, यदि हम ऐसा कह सकें, पारिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित किसी मामले के सबूत के 'पंचशील' का निर्माण करते हैं।"

इसके बाद अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने *तन्वीबेन पंकजकुमार दिवेतिया बनाम गुजरात राज्य,* (1997) 7 एससीसी 156 में दिए गए निर्णय पर भरोसा जताया। उन्होंने उसमें दर्ज निम्नलिखित टिप्पणियों पर भरोसा जताया:-

"45. पारिस्थितिजन्य साक्ष्यों के आधार पर दोषसिद्धि का आधार बनाने का सिद्धांत इस न्यायालय के कई निर्णयों में दर्शाया गया है और कानून सुस्थापित है कि प्रत्येक दोषारोपणकारी परिस्थिति को विश्वसनीय और निर्णायक साक्ष्य द्वारा स्पष्ट रूप से स्थापित किया जाना चाहिए और इस प्रकार सिद्ध की गई परिस्थितियों को घटनाओं की एक ऐसी श्रृंखला बनानी चाहिए जिससे अभियुक्त के दोष के बारे में एकमात्र अपरिहार्य निष्कर्ष सुरक्षित रूप से

निकाला जा सके और दोष के विरुद्ध कोई अन्य परिकल्पना संभव न हो। इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से चेतावनी दी है कि मुख्य रूप से पारिस्थितिजन्य साक्ष्य पर निर्भर मामले में, हमेशा यह खतरा बना रहता है कि अटकलें या संदेह कानूनी सबूत का स्थान ले सकते हैं। न्यायालय को स्वयं इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि घटनाक्रम की श्रृंखला की विभिन्न परिस्थितियाँ स्पष्ट रूप से स्थापित की गई हैं, और घटनाओं की यह पूर्ण श्रृंखला ऐसी होनी चाहिए जो अभियुक्त के निर्दोष होने की किसी युक्तिसंगत संभावना को समाप्त कर दे। यह भी संकेत दिया गया है कि जब महत्वपूर्ण कड़ी चली जाती है, तो परिस्थितियों की श्रृंखला टूट जाती है और अन्य परिस्थितियाँ किसी भी तरह से, सभी उचित संदेहों से परे अभियुक्त के दोष को स्थापित नहीं कर सकती हैं। यह माना गया है कि न्यायालय को सतर्क रहना चाहिए और इस खतरे से बचना चाहिए कि संदेह, कानूनी सबूत का स्थान न ले ले; क्योंकि कई बार अनजाने में नैतिक निश्चितता और कानूनी सबूत के बीच की दूरी बहुत कम रह जाती है। इस न्यायालय द्वारा यह संकेत दिया गया है कि 'सच हो सकता है' और 'सच होना ही चाहिए' के बीच एक लंबी मानसिक दूरी है और यही अटकलों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करती है। (*जहरलाल दास बनाम उड़ीसा राज्य* : 1991 3 एससीसी 27)

46. हम यहाँ यह संकेत दे सकते हैं कि जितनी अधिक संदिग्ध परिस्थितियाँ होंगी, उतनी ही अधिक सावधानी और सतर्कता बरतने की आवश्यकता है, अन्यथा संदिग्ध परिस्थितियाँ अनजाने में न्यायालय की न्यायनिर्णयन विचार प्रक्रिया में प्रवेश कर सकती हैं, भले ही उन संदिग्ध परिस्थितियों को निर्णायक और विश्वसनीय साक्ष्यों द्वारा स्पष्ट रूप से स्थापित न किया गया हो। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि इस मामले में, अपीलकर्ता को दोषसिद्ध करने

का न्यायालय का निर्णय, न्यायालय की न्यायनिर्णयन विचार प्रक्रिया में संदिग्ध परिस्थितियों के प्रवेश करने का ही परिणाम रहा है।"

विद्वान अधिवक्ता ने *सुच्चा सिंह बनाम पंजाब राज्य,* (2001) 4 एससीसी 375 पर भी भरोसा जताया। इस निर्णय पर इस तर्क का समर्थन करने के लिए भरोसा किया गया था कि जहाँ साक्ष्य में कोई कमी हो, वहाँ पारिस्थितिजन्य साक्ष्य पर भरोसा नहीं किया जा सकता। उससे यह इंगित किया गया कि इस न्यायालय ने यह माना है कि अभियुक्त के विरुद्ध आरोपित आपराधिक कृत्य के प्रत्येक पहलू को ऐसे साक्ष्य के आधार पर स्थापित किया जाना चाहिए, जो इस निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए पर्याप्त हो कि उक्त परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर निकाले गए निष्कर्ष के अतिरिक्त कोई अन्य दृष्टिकोण संभव नहीं है। इस संबंध में, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने पूर्वोक्त उद्धृत निर्णय में दर्ज निम्नलिखित टिप्पणियों पर भरोसा जताया।

"19. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 का उद्देश्य अभियोजन साक्ष्य में कमी को भरना नहीं है। उन्होंने *एटिगले बनाम आर* एआईआर 1936 पीसी 169, और साथ ही *स्टीफन ए. सेनेविर्त्ने बनाम द किंग*: एआईआर 1936 पीसी 289 में प्रिवी काउंसिल द्वारा की गई टिप्पणियों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। वास्तव में, उनमें निहित टिप्पणियों पर इस न्यायालय द्वारा न्यायमूर्ति विवियन बोस द्वारा लिखित एक प्रारंभिक निर्णय, *शंभू नाथ मेहरा बनाम अजमेर राज्य*, एआईआर 1956 एससी 404 में विचार किया गया था। विद्वान न्यायाधीश द्वारा उपर्युक्त निर्णय में दिए गए कानून के वक्तव्य को हमारे द्वारा *पश्चिम बंगाल राज्य बनाम मीर मोहम्मद उमर,* 2000 (8) एससीसी 382 में उद्धृत किया गया है। उपर्युक्त निर्णय में हमारे द्वारा की गई टिप्पणी का एक और हिस्सा उद्धृत करना उपयोगी है:

"33. तथ्य की उपधारणा का अर्थ है किसी अन्य तथ्य के अस्तित्व से किसी एक तथ्य के अस्तित्व के संबंध में निकाला गया निष्कर्ष, जब तक कि उस निष्कर्ष की सत्यता का खंडन न कर दिया जाए। तथ्य की उपधारणा साक्ष्य विधि में एक नियम है कि एक तथ्य, जो अन्यथा संदेहास्पद हो, उसका अनुमान कुछ अन्य सिद्ध तथ्यों से लगाया जा सकता है। जब न्यायालय सिद्ध तथ्यों के किसी अन्य समूह से किसी तथ्य के अस्तित्व का अनुमान लगाता है, तब वह तर्क-वितर्क की प्रक्रिया अपनाकर सर्वाधिक संभावित स्थिति के रूप में एक तार्किक निष्कर्ष पर पहुँचता है। उपरोक्त सिद्धांत को भारत में तब विधायी मान्यता प्राप्त हुई जब साक्ष्य अधिनियम में धारा 114 को शामिल किया गया। यह न्यायालय को किसी भी ऐसे तथ्य के अस्तित्व की उपधारणा करने के लिए सशक्त बनाता है जिसके बारे में वह सोचता है कि ऐसा होना संभावित है। उस प्रक्रिया में न्यायालय मामले के तथ्यों के संबंध में प्राकृतिक घटनाओं के सामान्य क्रम, मानवीय आचरण आदि का ध्यान रखेगा।"

20. हमने इंगित किया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 का उद्देश्य अभियोजन को अभियुक्त के दोष को उचित संदेह से परे सिद्ध करने के उसके भार से मुक्त करना नहीं है, बल्कि यह धारा उन मामलों में लागू होगी जहाँ अभियोजन उन तथ्यों को सिद्ध करने में सफल रहा है जिनसे कुछ अन्य तथ्यों के अस्तित्व के संबंध में एक उचित निष्कर्ष निकाला जा सकता है, जब तक कि अभियुक्त, ऐसे तथ्यों के संबंध में विशेष ज्ञान होने के कारण, कोई ऐसा स्पष्टीकरण देने में विफल न रहे जो न्यायालय को एक अलग निष्कर्ष निकालने के लिए प्रेरित कर सके।"

20. उपर्युक्त निर्णयों के आधार पर, अभियुक्त-अपीलकर्ता की ओर से प्रस्तुत पहला तर्क यह था कि अभियोजन द्वारा अभियुक्त-अपीलकर्ता के हाथों मृतक सुरेश की हत्या किए जाने के तथ्य को स्थापित करने के लिए कोई सामग्री पेश नहीं की गई थी। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, उपर्युक्त कमी को किसी भी उपधारणा के आधार पर नहीं भरा जा सकता था।

21. हमने पूर्ववर्ती कंडिका में उल्लिखित तर्क के आधार पर अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत पहले तर्क पर विचार किया है। अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत प्रच्छन्न दलील में, हमें एक निहित स्वीकारोक्ति मिलती है, अर्थात्, विद्वान अधिवक्ता यह स्वीकार करते हैं, कि अभियोजन ने अभियुक्त-अपीलकर्ता के हाथों मृतक सुरेश के व्यपहरण के तथ्य को सिद्ध करने के लिए मामले के अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य रखे थे। चाहे जो भी हो, ऐसा कोई भी निष्कर्ष निकाले बिना; हम फिर भी यह निर्धारित करने का प्रयास करेंगे कि क्या अभियोजन, अभियुक्त-अपीलकर्ता के हाथों मृतक सुरेश के व्यपहरण के तथ्य को स्थापित करने में सफल रहा था। जहाँ तक मामले के वर्तमान पहलू का संबंध है, सबसे पहले सरस्वती, अभियोजन साक्षी -8 के बयान का उल्लेख किया जा सकता है, जिसमें उन्होंने पुष्टि की कि 27.7.2009 को, रात लगभग 9 बजे, जब वह अपने निवास पर थीं, उन्हें अपने मोबाइल फोन नंबर 9943020435 पर एक कॉल प्राप्त हुई थी। कॉल करने वाले ने अपनी पहचान शंकर के रूप में बताई। उन्होंने सशपथ बयान दिया, कि कॉल करने वाले ने उनसे माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) के फोन नंबर के बारे में पूछताछ की थी। उन्होंने कहा कि उन्होंने उक्त शंकर से यह कहते हुए उत्तर दिया कि वह कुछ समय बाद उसे पुनः फोन करे, और इस बीच वह माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) का फोन नंबर प्राप्त कर लेगी। पहली कॉल के तुरंत बाद, सरस्वती (अभियोजन साक्षी 8) ने सशपथ बयान दिया, कि उन्हें उसी व्यक्ति से दूसरी कॉल प्राप्त हुई थी। इस अवसर पर, सरस्वती (अभियोजन साक्षी -8) ने स्वीकार किया कि उन्होंने कॉल करने वाले को माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) का मोबाइल फोन नंबर प्रदान कर दिया था। स्वतंत्र साक्ष्य के माध्यम से अभियोजन इस स्थिति में था

कि वह यह स्थापित कर सके कि उपर्युक्त दो कॉलों में से पहली कॉल, सरस्वती द्वारा रात 9.22 बजे प्राप्त की गई थी, और दूसरी रात 9.25 बजे। कॉल करने वाले ने, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) का मोबाइल फोन नंबर प्राप्त करने के बाद, सरस्वती (अभियोजन साक्षी 8) द्वारा दिए गए मोबाइल फोन नंबर पर उसे (माहेश्वरी - अभियोजन साक्षी 1) कॉल किया। स्वतंत्र साक्ष्य के आधार पर अभियोजन यह भी स्थापित करने में सफल रहा है, कि माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को यह फोन कॉल रात 9.39 बजे उसी फोन नंबर से प्राप्त हुई थी जिससे सरस्वती (अभियोजन साक्षी 8) को दो कॉल प्राप्त हुई थीं। अपने बयान में, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ने दावा किया, कि कॉल करने वाले ने उसके बेटे सुरेश की सुरक्षित वापसी के लिए 5,00,000/- रुपये की फिरौती मांगी थी। इस मोड़ पर, अपने बयान के अनुसार, माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) ने पुलिस को उक्त घटनाक्रम से अवगत कराने के लिए फिर से पुलिस थाने का दौरा किया। उपर्युक्त साक्ष्य, उन सुरागों में से एक था, जिन्हें पुलिस ने अभियुक्त-अपीलकर्ता की पहचान करने में अपनाया था।

22. उपरोक्त के अतिरिक्त, अभियोजन पक्ष ने मृतक सुरेश के व्यपहरणकर्ता के रूप में अपीलकर्ता की पहचान करने के लिए कमाली (अभियोजन साक्षी 2) के बयान पर भरोसा किया। अपने बयान में कमाली (अभियोजन साक्षी 2) ने पुष्टि की कि वह मृतक सुरेश के साथ 27.7.2009 को शाम लगभग 4.30 बजे विद्यालय वैन में अपने गाँव कारकुडल लौटी थी। कमाली (अभियोजन साक्षी 2) के बयान के अनुसार, जब वे विद्यालय वैन से उतरे, तो उसने अभियुक्त-अपीलकर्ता को अपनी मोटरसाइकिल के पास खड़े देखा था। कमाली (अभियोजन साक्षी 2) की गवाही के अनुसार, अभियुक्त-अपीलकर्ता ने अपने हाथ से सुरेश की ओर इशारा किया था। तदनुसार मृतक सुरेश और कमाली (अभियोजन साक्षी 2) अभियुक्त-अपीलकर्ता के पास गए थे। अभियुक्त-अपीलकर्ता ने सुरेश को बताया था कि उसकी माँ और दादी अस्वस्थ थीं, और उसकी माँ ने उसे (सुरेश को) अस्पताल लाने के लिए कहा था। इसके बाद, कमाली (अभियोजन साक्षी 2) के अनुसार, अभियुक्त-अपीलकर्ता मृतक सुरेश को अपनी

मोटरसाइकिल पर बैठाकर ले गया था। यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि कमाली (अभियोजन साक्षी 2) ने 25.8.2009 को कडलूर केंद्रिय कारागार में न्यायिक दंडाधिकारी ए. बशीर (अभियोजन साक्षी 10) की निगरानी में आयोजित एक शिनाख्त परेड में अभियुक्त-अपीलकर्ता की विधिवत पहचान की थी। न्यायिक दंडाधिकारी ए. बशीर की गवाही के अनुसार, कमाली (अभियोजन साक्षी 2) ने अभियुक्त-अपीलकर्ता की सही पहचान की थी। उपरोक्त साक्ष्य अभियुक्त-अपीलकर्ता की उस व्यक्ति के रूप में पहचान करने का दूसरा आधार था, जिसने मृतक सुरेश का व्यपहरण किया था।

23. कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) का बयान पहले ही ऊपर वर्णित किया जा चुका है। कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) ने 27.7.2009 को शाम लगभग 4.30 बजे सुरेश को विद्यालय वैन से उतरते हुए देखा था, जब उक्त वैन गाँव कारकुडल वापस लौटी थी। कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) ने पुष्टि की कि उसने अभियुक्त-अपीलकर्ता को अपनी मोटरसाइकिल के साथ एक नीम के पेड़ के नीचे विद्यालय वैन के आने की प्रतीक्षा करते हुए भी देखा था। कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) ने यह भी सशपथ यह बयान दिया कि उसने अभियुक्त-अपीलकर्ता को सुरेश को अपनी मोटरसाइकिल पर ले जाते हुए देखा था। घटना के दिन ही उसने माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) को सूचित किया था कि सुरेश को एक व्यक्ति अपनी मोटरसाइकिल पर ले गया है। जिस प्रकार कमाली (अभियोजन साक्षी 2) ने शिनाख्त परेड में अभियुक्त-अपीलकर्ता की पहचान की थी, उसी प्रकार कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) ने भी 25.8.2009 को कडलूर केंद्रिय कारागार में आयोजित शिनाख्त परेड में भाग लिया था। उसने भी न्यायिक दंडाधिकारी की उपस्थिति में अभियुक्त-अपीलकर्ता की पहचान की थी। कुरिंजी सेलवन (अभियोजन साक्षी 3) का बयान अभियुक्त-अपीलकर्ता को उस व्यक्ति के रूप में पहचानने का तीसरा आधार है, जो 27.7.2009 को सुरेश को अपनी मोटरसाइकिल पर ले गया था।

24. पिछले तीन पूर्ववर्ती कंडिकाओं में दर्ज साक्ष्यों के आधार पर, इसमें रत्ती भर भी संदेह नहीं हो सकता कि अभियुक्त-अपीलकर्ता की पहचान ठोस साक्ष्यों के माध्यम से उस व्यक्ति के रूप में की गई है, जो 27.7.2009 को सुरेश के विद्यालय वैन से उतरने पर उसे अपने साथ ले गया था। अतः, अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा सुरेश के व्यपहरण का तथ्य विधिवत रूप से सिद्ध होता है।

25. मुख्य विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या उपरोक्त परिस्थितिजन्य साक्ष्य यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त हैं कि अभियुक्त-अपीलकर्ता ने सुरेश की हत्या की थी। अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, मामले के अभिलेख पर ऐसा कोई भी साक्ष्य मौजूद नहीं है, जो सुरेश की मृत्यु का कारण बनने वाले किसी भी कृत्य में अभियुक्त-अपीलकर्ता की भागीदारी को दर्शाता हो। इसलिए, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क था कि भले ही अभियुक्त-अपीलकर्ता को सुरेश के व्यपहरण का दोषी ठहराया जा सकता है, लेकिन चूंकि यह स्थापित नहीं हुआ है कि उसने सुरेश की हत्या की थी, इसलिए इस मामले के तथ्यों के आधार पर उसे हत्या का दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

26. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत दलीलों पर गंभीरतापूर्वक विचार करने के पश्चात, हमारा यह मत है कि वर्तमान दलील पूरी तरह से अनुचित और दोषपूर्ण है। जहाँ तक मामले के इस पहलू का संबंध है, इस न्यायालय द्वारा *सुच्चा सिंह* के मामले (उपरोक्त) में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है, जिसमें निम्नानुसार व्यवस्था दी गई थी:-

> "21. हम इस बात से अवगत हैं कि इन दिनों अक्सर क्या हो रहा है। व्यक्तियों का दूसरों के सामने व्यपहरण किया जाता है और उन्हें जबरन सबकी नज़रों से दूर ले जाया जाता है और बाद में उन अपहृत व्यक्तियों की हत्या कर दी जाती है। यदि ऐसा कोई कानूनी सिद्धांत प्रतिपादित किया जाना है कि ऐसे

अपहृत व्यक्तियों की हत्या के लिए ऊपर वर्णित परिस्थितियों के अलावा अनिवार्य रूप से स्वतंत्र साक्ष्य होना चाहिए, तो हम ऐसी आपराधिक गतिविधियों को संरक्षण देने के लिए एक सुरक्षित न्यायशास्त्र प्रदान कर रहे होंगे। भारत अब ऐसा कोई कानूनी सिद्धांत निर्धारित करने का जोखिम नहीं उठा सकता जो अपराधियों को दूसरों की नज़रों से ओझल होकर निर्दोष अपहृतों की हत्या करने की उनकी गतिविधियों के लिए सुरक्षा कवच प्रदान करता हो।"

उपरोक्त निर्धारण के अवलोकन से यह स्पष्ट होगा कि व्यपहरण के तथ्य के सिद्ध हो जाने पर, अपहृत व्यक्ति की परिणामी हत्या का अनुमान लगाया जाना अपेक्षित है। हम उपरोक्त निष्कर्ष से सहमत हैं। इस अनुमान के पीछे का तर्क सरल है। एक बार जब यह प्रदर्शित हो जाता है कि संबंधित व्यक्ति का व्यपहरण किया गया था, तो यह भार व्यपहरणकर्ता पर आ जाता है कि वह यह स्थापित करे कि अपहृत व्यक्ति को उसकी अभिरक्षा से कब और कैसे मुक्त किया गया था। व्यपहरणकर्ता द्वारा ऐसे किसी भी प्रमाण के अभाव में, यह अनुमान लगाना स्वाभाविक होगा कि अपहृत व्यक्ति तब तक व्यपहरणकर्ता की अभिरक्षा में रहा जब तक कि उसे मार नहीं दिया गया। यह निष्कर्ष भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 से भी निकलता है जिसे नीचे उद्धृत किया जा रहा है-

"**106. विशेषतः जानकारी में होने वाले तथ्य को साबित करने का भार**—जब कोई तथ्य विशेष रूप से किसी व्यक्ति की जानकारी में हो, तब उस तथ्य को साबित करने का भार उसी पर होता है।

दृष्टांत

(क) जब कोई व्यक्ति उस आशय से भिन्न किसी अन्य आशय से कोई कार्य करता है, जो उस कार्य के स्वरूप और परिस्थितियों से प्रतीत होता है, तब उस आशय को साबित करने का भार उस पर होता है।

(ख) 'क' पर बिना टिकट रेल में यात्रा करने का आरोप है। यह साबित करने का भार कि उसके पास टिकट था, उस पर है।"

27. चूंकि इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में यह विधिवत स्थापित हो चुका है कि सुरेश का व्यपहरण अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा किया गया था; और अभियुक्त-अपीलकर्ता इस मामले के अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत करने में विफल रहा है जो उसकी अभिरक्षा से सुरेश की रिहाई को दर्शाती हो। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 इस तथ्य को साबित करने का भार उसी पर डालती है। अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा ऐसे किसी साक्ष्य को प्रस्तुत न किए जाने की स्थिति में, यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि सुरेश की हत्या होने तक वह अभियुक्त-अपीलकर्ता की ही अभिरक्षा में रहा था। अभियुक्त-अपीलकर्ता द्वारा यह चरम कदम उठाने का मकसद/कारण यह था कि उसके द्वारा मांगी गई फिरौती की राशि का भुगतान नहीं किया गया था। इसलिए, हम संतुष्ट हैं कि वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य मौजूद हैं जिनके आधार पर अभियुक्त-अपीलकर्ता के हाथों सुरेश की हत्या का तथ्य भी स्थापित हो जाता है।

28. अब हम अपने उपरोक्त निष्कर्ष की पुष्टि करने के लिए मामले के अभिलेख पर उपलब्ध कुछ अन्य साक्ष्यों का उल्लेख कर सकते हैं। इस संबंध में, यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि जब अभियुक्त-अपीलकर्ता को 30.7.2009 को हिरासत में लिया गया था, तो उसने काशीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) की उपस्थिति में एक स्वीकारोक्ति बयान दिया था कि उसने सुरेश की गला घोंटकर हत्या कर दी थी, जिसके बाद उसके शव को एक बोरी में डालकर मीरनकुलम टैंक में फेंक दिया गया था। इसके पश्चात, अभियुक्त-अपीलकर्ता की

निशानदेही पर ही सुरेश का शव मीरनकुलम टैंक से बरामद किया गया था। जैसा कि अभियुक्त-अपीलकर्ता ने बताया था, शव एक बोरी में पाया गया था। डॉ. कथिरवेल (अभियोजन साक्षी 12) ने सुरेश के शव का शवपरीक्षण करने के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि सुरेश की मृत्यु डूबने से पहले दम घुटने के कारण हुई थी। यह साक्ष्य स्पष्ट रूप से अभियुक्त-अपीलकर्ता को सुरेश की हत्या के अपराधी के रूप में सिद्ध करता है। इसके अतिरिक्त, काशीनाथन (अभियोजन साक्षी 13) का बयान आगे यह भी प्रकट करता है कि सुरेश का विद्यालय बैग, किताबें और स्लेट अभियुक्त-अपीलकर्ता के आवास से बरामद किए गए थे। इन वस्तुओं के सुरेश से संबंधित होने की पुष्टि माहेश्वरी (अभियोजन साक्षी 1) द्वारा की गई थी। ऊपर वर्णित तथ्यात्मक और कानूनी स्थिति को देखते हुए, हमारे मन में कोई संदेह नहीं है कि अभियोजन पक्ष ने न केवल सुरेश के व्यपहरण को, बल्कि अभियुक्त-अपीलकर्ता के हाथों उसकी हत्या को भी स्थापित करने के लिए पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत की थी।

29. विवाद के गुण-दोषों पर दी गई दलीलों के अतिरिक्त, अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने विचारण न्यायालय द्वारा दी गई और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट की गई मौत की सजा को भी चुनौती दी। सुनवाई के दौरान, अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह पुरजोर तर्क था कि इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में आजीवन कारावास का दंड न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए पर्याप्त होता। अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की यह भी दलील थी कि इस मामले के तथ्य और परिस्थितियाँ वर्तमान मामले को 'दुर्लभ से दुर्लभतम' श्रेणी में रखने के लिए पर्याप्त नहीं हैं, जहाँ केवल मृत्युदंड ही न्याय के उद्देश्यों को पूरा कर सके। उपरोक्त तर्क के समर्थन में, अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने सर्वप्रथम इस न्यायालय द्वारा *हरेश मोहनदास राजपूत बनाम महाराष्ट्र राज्य*, (2011) 12 एससीसी 56 में दिए गए एक हालिया निर्णय पर भरोसा किया, जिसमें पूर्ववर्ती निर्णयों पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय ने उन परिस्थितियों को रेखांकित किया था

जिनमें मृत्युदंड दिया जा सकता है। उसमें दर्ज निम्नलिखित टिप्पणियों पर भरोसा किया गया था:-

"मृत्युदंड - कब न्यायोचित है:

"18. *बच्चन सिंह बनाम पंजाब राज्य,* (1980) 2 एससीसी 684 में निर्धारित दिशा-निर्देशों को निम्नानुसार संकलित किया जा सकता है:

(i) मृत्यु का चरम दंड तब तक नहीं दिया जाना चाहिए, जब तक कि मामला अत्यधिक घोर दोषिता का अत्यंत गंभीर मामला न हो।

(ii) मृत्युदंड का विकल्प चुनने से पहले, 'अपराध' की परिस्थितियों के साथ-साथ 'अपराधी' की परिस्थितियों पर भी विचार किया जाना आवश्यक है।

(iii) आजीवन कारावास नियम है और मृत्युदंड एक अपवाद है। दूसरे शब्दों में, मृत्युदंड केवल तभी दिया जाना चाहिए जब अपराध की प्रासंगिक परिस्थितियों को देखते हुए आजीवन कारावास पूरी तरह से अपर्याप्त दंड प्रतीत होता हो, और बशर्ते, और केवल तभी, जब अपराध की प्रकृति और परिस्थितियों तथा सभी प्रासंगिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए आजीवन कारावास का दंड देने के विकल्प का विवेकपूर्ण प्रयोग न किया जा सके।

(iv) गंभीरकारी और शमनकारी परिस्थितियों का एक लेखा-जोखा तैयार किया जाना चाहिए और ऐसा करने में, शमनकारी परिस्थितियों को पूरा महत्व दिया जाना चाहिए तथा विकल्प का प्रयोग करने से पहले गंभीरकारी और शमनकारी परिस्थितियों के बीच एक उचित संतुलन बनाया जाना चाहिए।

19. *मच्छी सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य,* (1983) 2 एससीसी 684 में, इस न्यायालय ने "दुर्लभ से दुर्लभतम" की अवधारणा का विस्तार बच्चन सिंह मामले में सूचीबद्ध गंभीरकारी कारकों से आगे बढ़कर उन मामलों तक किया, जहाँ किसी समुदाय की "सामूहिक चेतना" इतनी अधिक स्तब्ध हो जाती है कि वह न्यायिक शक्तियों के धारकों से मृत्युदंड देने की अपेक्षा करती है, भले ही मृत्युदंड को बनाए रखने की वांछनीयता के बारे में उनकी व्यक्तिगत राय कुछ भी हो, ऐसा दंड दिया जा सकता है। लेकिन इस मामले में खंडपीठ ने इस बात को रेखांकित किया कि किसी मामले में शमनकारी परिस्थितियों को पूरा महत्व दिया जाना चाहिए और गंभीरकारी एवं शमनकारी परिस्थितियों के बीच एक उचित संतुलन बनाया जाना चाहिए।

20. "दुर्लभ से दुर्लभतम मामला" तब होता है जब कोई दोषी समाज के सौहार्दपूर्ण और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए संकट और खतरा बन जाता है। अपराध जघन्य या क्रूर हो सकता है, लेकिन हो सकता है कि वह "दुर्लभ से दुर्लभतम मामले" की श्रेणी में न आए। ऐसा विश्वास करने का कोई कारण नहीं होना चाहिए कि अभियुक्त को सुधारा या पुनर्वासित नहीं किया जा सकता है और इस बात की संभावना है कि वह हिंसा के ऐसे आपराधिक कृत्यों को जारी रखेगा जो समाज के लिए निरंतर खतरा बनेंगे। अभियुक्त समाज के लिए संकट हो सकता है और आगे भी बना रह सकता है, जिससे समाज के शांतिपूर्ण और सौहार्दपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए खतरा पैदा हो। अपराध करने का तरीका ऐसा होना चाहिए कि उसके परिणामस्वरूप समुदाय में तीव्र और अत्यधिक आक्रोश उत्पन्न हो और समाज की सामूहिक चेतना स्तब्ध रह जाए। जहाँ कोई अभियुक्त किसी क्षणिक उत्तेजना के वश में आकर कार्य नहीं करता है और स्वयं को एक सुनियोजित अपराध में लिप्त करता है तथा उसे

अत्यंत बारीकी से अंजाम देता है, तो ऐसे वीभत्स अपराध के लिए मृत्युदंड सबसे उपयुक्त सजा हो सकती है। मृत्युदंड तब न्यायोचित हो सकता है जहाँ पीड़ित निर्दोष बच्चे और असहाय महिलाएँ हों। इस प्रकार, यदि अपराध अत्यंत क्रूर और अमानवीय तरीके से किया गया है जो कि बेहद नृशंस, विकृत, पिशाचतुल्य, घृणित और कायरतापूर्ण है, जहाँ उसका कृत्य समाज के संपूर्ण नैतिक ताने-बाने को प्रभावित करता है, जैसे कि सत्ता या राजनीतिक महत्वाकांक्षा के लिए किया गया अपराध या संगठित आपराधिक गतिविधियों में लिप्त होना, तो मृत्युदंड दिया जाना चाहिए। (देखें: *सी. मुनियप्पन और अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य,* एआईआर 2010 एससी 3718; *रबिंद्र कुमार पाल उर्फ दारा सिंह बनाम रिपब्लिक ऑफ इंडिया,* (2011) 2 एससीसी 490; *सुरेंद्र कोली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य,* (2011) 4 एससीसी 80; *मोहम्मद मन्नान (उपरोक्त); और सुदाम बनाम महाराष्ट्र राज्य,* (2011) 7 एससीसी 125)।

21. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि मृत्युदंड देने के लिए, गंभीरकारी परिस्थितियों का अस्तित्व होना चाहिए और परिणामस्वरूप शमनकारी परिस्थितियों का अभाव होना चाहिए। मृत्युदंड दिया जाना चाहिए या नहीं, यह वर्तमान मामले के तथ्यात्मक परिदृश्य पर निर्भर करेगा।"

इस न्यायालय द्वारा *रामनरेश एवं अन्य बनाम छत्तीसगढ़ राज्य,* (2012) 4 एससीसी 257 में दिए गए निर्णय पर भी भरोसा किया गया। जहाँ तक वर्तमान निर्णय का संबंध है, विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित टिप्पणियों पर भरोसा किया:-

"मृत्युदंड और इसे आजीवन कारावास में परिवर्तित करने को नियंत्रित करने वाले सिद्धांत

56. दुनिया भर में दृष्टिकोण के रूपांतरण और दंडादेश के सिद्धांतों में आए मौलिक परिवर्तनों के बावजूद, दंडादेश नीति पर परस्पर विरोधी विचारों को शांत करना संभव नहीं हो पाया है। दंडादेश नीति, आपराधिक न्यायशास्त्र का एक महत्वपूर्ण और अविभाज्य पहलू होने के नाते, इसमें निश्चितता और अधिक स्पष्टता प्रदान करने के लिए न्यायालयों का ध्यान आकर्षित करती रही है।

57. मृत्युदंड व्यापक सामाजिक और न्यायिक चर्चा एवं गहन विमर्श का विषय रहा है। इसे चाहे जिस भी दृष्टिकोण से देखा जाए, कानून का एक निर्विवाद कथन यह सामने आता है कि ऐसा कोई भी सार्वभौमिक सूत्र बताना न तो संभव है और न ही विवेकपूर्ण होगा जो अपराध विज्ञान के उन सभी मामलों पर लागू हो सके जहाँ मृत्युदंड निर्धारित किया गया है। यह सदैव किसी दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। इस न्यायालय ने विभिन्न कानूनी सिद्धांतों को प्रतिपादित किया है जो उन मामलों में न्यायिक विवेक के प्रयोग के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत होंगे जहाँ प्रश्न यह हो कि मृत्युदंड दिया जाना चाहिए अथवा नहीं।

58. कानून न्यायालय से ऐसी सजा सुनाने के लिए विशेष कारण दर्ज करने की अपेक्षा करता है। इसलिए, न्यायालय को अपराध की प्रकृति, वह कैसे और किन परिस्थितियों में किया गया, अपराध जिस क्रूरता के साथ किया गया उसकी सीमा, अपराध का मकसद, अपराध करने के समय कोई उत्तेजक या गंभीरकारी परिस्थितियाँ, दोषी के सुधरने या पुनर्वास की संभावना, आजीवन कारावास की सजा की पर्याप्तता और अन्य संबंधित परिस्थितियों जैसे मामलों पर विचार करना होता है। ये कारक किन्हीं भी दो मामलों में समान या एक जैसे नहीं हो सकते।

59. इस प्रकार, न्यायालय के लिए यह अनिवार्य है कि वह प्रतिपादित सिद्धांतों के आलोक में प्रत्येक मामले की उसके अपने तथ्यों के आधार पर जांच करे। किसी दिए गए मामले के तथ्यों पर इन सिद्धांतों को लागू करने के उपरांत ही न्यायालय इस अंतिम निष्कर्ष पर पहुँच सकता है कि क्या विचाराधीन मामला 'दुर्लभ से दुर्लभतम' मामलों में से एक है और क्या केवल मृत्युदंड देना ही न्याय के उद्देश्यों को पूरा करेगा। इसके अलावा, न्यायालय यह भी ध्यान में रखेगा कि क्या केवल ऐसी सजा ही पर्याप्त दंडात्मक और उद्देश्यपूर्ण निवारक होने के नाते, निर्णय के उद्देश्य को पूरा करेगी।

xxx xxx xxx xxx

72. उपरोक्त निर्णय हमें मृत्युदंड देने से संबंधित न्यायालय के सिद्धांत प्रदान करते हैं। केवल इसलिए कि कोई अपराध अपने आप में जघन्य है, अन्य कारकों और संबद्ध परिस्थितियों के संदर्भ के बिना मृत्युदंड देने के लिए पर्याप्त कारण नहीं हो सकता।

73. भारतीय दंड संहिता के तहत अधिकांश जघन्य अपराध मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय हैं। वह अपने आप में यह संकेत नहीं देता कि ऐसे सभी अपराधों में केवल मृत्युदंड ही दिया जाना चाहिए। हमें इस बात पर गौर करना चाहिए, भले ही इसे दोहराना पड़े, कि ऐसे मामलों में आजीवन कारावास देना एक नियम होगा, जबकि 'मृत्युदंड' एक अपवाद होगा। 'दुर्लभ से दुर्लभतम मामला' शब्द, जो इस न्यायालय द्वारा घोषित एक निरंतर निर्धारक नियम है, स्वयं यह स्पष्ट करता है कि इसे एक असाधारण मामला होना चाहिए।

74. किसी विशिष्ट व्यक्ति का जीवन विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के बिना नहीं लिया जा सकता और यही संवैधानिक अधिदेश है। कानून विशेष कारणों को दर्ज करने की परिकल्पना करता है और इसलिए, 'विशेष' अभिव्यक्ति को एक निश्चित अर्थ और भावार्थ दिया जाना चाहिए। सामान्य 'कारणों' के विपरीत 'विशेष कारण', विशेष कारणों की अनिवार्यता की शर्त रखकर न्यायिक विवेक के प्रयोग पर सीमाएं लगाने के विधायी अधिदेश को व्यक्त करते हैं।

75. चूंकि, इस न्यायालय के बाद के निर्णयों ने *बच्चन सिंह* (उपरोक्त) और *मच्छी सिंह* (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों में और विस्तार किया है, इसलिए इन सिद्धांतों को हाल के निर्णयों के अनुरूप लाते हुए इनका पुनर्कथन करना उपयोगी होगा।

76. इस न्यायालय द्वारा अपने हालिया निर्णयों में प्रतिपादित कानून, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, उन सिद्धांतों को और विस्तृत करता है जो *बच्चन सिंह* (उपरोक्त) और उसके बाद *मच्छी सिंह* (उपरोक्त) के मामले में बताए गए थे। उपरोक्त निर्णय मुख्य रूप से इन सिद्धांतों को दो अलग-अलग श्रेणियों में विभाजित करते हैं - एक 'गंभीरकारी परिस्थितियाँ' और दूसरी 'शमनकारी परिस्थितियाँ'। न्यायालय इन दोनों पहलुओं के संचयी प्रभाव पर विचार करेगा और सामान्यतः, न्यायालय के लिए यह बहुत उपयुक्त नहीं हो सकता है कि वह दंडादेश नीति के सबसे महत्वपूर्ण पहलू का निर्णय निम्न में से किसी भी शीर्षक के तहत केवल एक वर्ग के संदर्भ में करे, जबकि अन्य शीर्षकों के तहत आने वाले अन्य वर्गों की पूरी तरह से अनदेखी कर दी जाए। इन दोनों के बीच संतुलन बनाना न्यायालय का प्राथमिक कर्तव्य है। न्यायालय के लिए यह उचित होगा कि वह संतुलन की उस प्रक्रिया के आधार

पर अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचे जो आपराधिक न्याय प्रणाली को बेहतर ढंग से प्रशासित करने में मदद करे और न्यायालय द्वारा एक प्रभावी एवं सार्थक तर्क प्रदान करे जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354(3) के तहत परिकल्पित है।

गंभीरकारी परिस्थितियाँ :

(1) हत्या, बलात्कार, सशस्त्र डकैती, व्यपहरण आदि जैसे जघन्य अपराधों से संबंधित वे अपराध जो किसी ऐसे अभियुक्त द्वारा किए गए हों जिसका मृत्युदंड योग्य गंभीर अपराध के लिए दोषसिद्धि का पूर्व इतिहास रहा हो, या ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए अपराध जिसका गंभीर हमलों और आपराधिक दोषसिद्धियों का एक लंबा इतिहास रहा हो।

(2) अपराध तब किया गया था जब अपराधी किसी अन्य गंभीर अपराध को अंजाम देने में लगा हुआ था।

(3) अपराध आम जनता में भय व्याप्त करने के इरादे से किया गया था और किसी सार्वजनिक स्थान पर ऐसे हथियार या उपकरण के माध्यम से किया गया था जो स्पष्ट रूप से एक से अधिक व्यक्तियों के जीवन के लिए खतरनाक हो सकता था।

(4) हत्या का अपराध फिरौती के लिए या धन अथवा आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए इसी तरह के अपराधों के उद्देश्य से किया गया था।

(5) सुपारी लेकर की गई हत्याएँ

(6) अपराध अत्यंत अपमानजनक और स्वेच्छाचारी ढंग से किया गया था जिसमें पीड़ित के प्रति अमानवीय व्यवहार और प्रताड़ना शामिल थी।

(7) अपराध किसी व्यक्ति द्वारा तब किया गया था जब वह वैध अभिरक्षा में था।

(8) हत्या या अपराध किसी ऐसे व्यक्ति को रोकने के लिए किया गया था जो कानूनी रूप से अपने कर्तव्य का पालन कर रहा था, जैसे कि स्वयं की या किसी अन्य की गिरफ्तारी या वैध परिरोध के स्थान पर अभिरक्षा। उदाहरण के लिए, किसी ऐसे व्यक्ति की हत्या जिसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 43 के तहत अपने कर्तव्य के वैध निर्वहन में कार्य किया हो।

(9) जब अपराध अनुपात में विशाल हो, जैसे कि पूरे परिवार या किसी विशेष समुदाय के सदस्यों की हत्या का प्रयास करना।

(10) जब पीड़ित निर्दोष, असहाय हो या कोई ऐसा व्यक्ति हो जो रिश्तों के विश्वास और सामाजिक मानदंडों पर भरोसा करता हो, जैसे कि कोई बच्चा, असहाय महिला, कोई बेटी या भतीजी जो अपने पिता/चाचा के साथ रह रही हो और ऐसे विश्वसनीय व्यक्ति द्वारा ही उसके विरुद्ध अपराध किया गया हो।

(11) जब हत्या ऐसे मकसद के लिए की गई हो जो पूर्ण नीचता और अधमता का प्रमाण देता हो।

(12) जब बिना किसी उकसावे के निर्ममतापूर्वक ढंग से हत्या की गई हो।

(13) जब अपराध इतनी क्रूरता से किया गया हो कि वह न केवल न्यायिक अंतरात्मा को, बल्कि समाज की अंतरात्मा को भी ठेस पहुँचाए या झकझोर दे।

शमनकारी परिस्थितियाँ :

(1) वह तरीका और परिस्थितियाँ जिनमें अपराध किया गया था, उदाहरण के लिए, सामान्य क्रम की स्थितियों के विपरीत अत्यधिक मानसिक या भावनात्मक विक्षोभ या अत्यधिक उकसावा।

(2) अभियुक्त की आयु एक प्रासंगिक विचार है लेकिन अपने आप में एक निर्णायक कारक नहीं है।

(3) अभियुक्त द्वारा पुनः अपराध में लिप्त न होने की संभावना और अभियुक्त के सुधरने तथा पुनर्वासित होने की संभावना।

(4) अभियुक्त की स्थिति यह दर्शाती है कि वह मानसिक रूप से दोषपूर्ण था और उस दोष ने अपने आपराधिक आचरण की परिस्थितियों को समझने की उसकी क्षमता को कम कर दिया था।

(5) वे परिस्थितियाँ, जो जीवन के सामान्य क्रम में ऐसे व्यवहार को संभव बनाती हों और दी गई स्थिति में मानसिक असंतुलन को जन्म देने का प्रभाव रखती हों, जैसे कि निरंतर उत्पीड़न या वास्तव में मानवीय व्यवहार को ऐसे चरम पर ले जाना कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्त को यह विश्वास हो गया हो कि वह अपराध करने में नैतिक रूप से न्यायोचित था।

(6) जहाँ साक्ष्यों के उचित मूल्यांकन पर न्यायालय का यह विचार हो कि अपराध पूर्व-नियोजित तरीके से नहीं किया गया था और मृत्यु किसी अन्य अपराध को करने के दौरान हुई थी तथा इस बात की संभावना थी कि उसे मुख्य अपराध करने के परिणाम के रूप में समझा जाए।

(7) जहाँ एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी गवाह की गवाही पर भरोसा करना पूर्णतः असुरक्षित हो, भले ही अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त का दोष सिद्ध कर दिया हो।

77. दंडादेश नीति से संबंधित प्रश्नों का निर्धारण करते समय, न्यायालय को कुछ सिद्धांतों का पालन करना होता है और ये सिद्धांत मृत्युदंड देने या न देने के संबंध में उपरोक्त विचारों के अतिरिक्त मार्गदर्शक सिद्धांत हैं।

सिद्धांत:

(1) न्यायालय को यह निर्धारित करने के लिए परीक्षण लागू करना होगा कि क्या यह मृत्युदंड देने के लिए 'दुर्लभ से दुर्लभतम' मामला था।

(2) न्यायालय की राय में, किसी अन्य दंड, अर्थात आजीवन कारावास का दिया जाना पूरी तरह से अपर्याप्त होगा और उससे न्याय के उद्देश्य पूरे नहीं होंगे।

(3) आजीवन कारावास नियम है और मृत्युदंड एक अपवाद है।

(4) अपराध की प्रकृति और परिस्थितियों तथा सभी प्रासंगिक विचारों को ध्यान में रखते हुए, आजीवन कारावास का दंडादेश देने के विकल्प का सावधानीपूर्वक प्रयोग नहीं किया जा सकता।

(5) अपराध करने की पद्धति (नियोजित या अन्यथा) और तरीका (क्रूरता एवं अमानवीयता की सीमा आदि) तथा ऐसे जघन्य अपराध को अंजाम देने वाली परिस्थितियाँ।

78. व्यापक रूप से कहा जाए तो ये न्यायिक विवेकाधिकार के प्रयोग के लिए स्वीकृत संकेतक हैं, किन्तु किसी न किसी प्रकार से अत्यधिक सूचीकरण करने का प्रयास कर न्यायिक विवेकाधिकार को सीमित करना सदैव वांछनीय नहीं माना जाता। दूसरे शब्दों में, ये वे विचार हैं जो अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय न्यायालय के मस्तिष्क में सामूहिक रूप से या अन्यथा प्रभाव डाल सकते हैं। इसे एक पूर्ण नियम के रूप में बताना कठिन है। प्रत्येक

मामले का निर्णय उसके अपने गुण-दोषों के आधार पर किया जाना चाहिए। न्यायिक घोषणाएं केवल उन सिद्धांतों को बता सकती हैं जो एक सीमित सीमा तक न्यायिक विवेक के प्रयोग को नियंत्रित करते हों। न्याय प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर ही किया जाना चाहिए। ये वे कारक हैं जिन पर न्यायालय पक्षकारों के बीच पूर्ण न्याय करने के अपने प्रयास में विचार कर सकता है।

79. इसके बाद न्यायालय गंभीरकारी और शमनकारी परिस्थितियों का एक लेखा-जोखा तैयार करेगा। दोनों पहलुओं को उनका यथोचित महत्व दिया जाना चाहिए। न्यायालय को इन दोनों के बीच संतुलन बिठाना होगा और यह देखना होगा कि न्याय का पलड़ा किस ओर झुकता है। अपराध और दंड के बीच अनुपात का सिद्धांत 'यथोचित प्रतिफल' का सिद्धांत है, जो प्रत्येक न्यायोचित आपराधिक दंडादेश के आधार के रूप में कार्य करता है। दूसरे शब्दों में, 'आनुपातिकता के सिद्धांत' का भारतीय आपराधिक न्यायशास्त्र के तहत दंडादेश नीति में महत्वपूर्ण अनुप्रयोग है। इस प्रकार, न्यायालय को न केवल यह परखना होगा कि क्या न्यायसंगत है, बल्कि व्यापक समाज पर पड़ने वाले प्रभाव को ध्यान में रखते हुए यह भी देखना होगा कि अभियुक्त किस दंड का पात्र है।

80. प्रत्येक अधिरोपित दंड का प्रभाव न केवल अकेले अभियुक्त पर, बल्कि संपूर्ण समाज पर भी पड़ना निश्चित है। अतः, मृत्यु का चरम दंड देते समय न्यायालयों को दंड के प्रतिशोधात्मक और निवारक पहलुओं पर विचार करना चाहिए।

81. जहाँ भी किया गया अपराध, उसे करने का तरीका, उसकी संबद्ध परिस्थितियाँ और पीड़ित का मकसद तथा उसकी स्थिति, निस्संदेह मामले को 'दुर्लभ से दुर्लभतम' मामलों के दायरे में लाती है और न्यायालय यह पाता है कि आजीवन कारावास देना अपर्याप्त दंड होगा, तो न्यायालय मृत्युदंड दे सकता है। जहाँ कहीं भी मामला 'दुर्लभ से दुर्लभतम' मामलों के किसी भी अपवाद के अंतर्गत आता है, वहाँ न्यायालय मृत्युदंड के स्थान पर आजीवन कारावास की सजा देते समय अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग कर सकता है।"

सबसे अंत में, इस न्यायालय द्वारा *ब्रजेंद्र सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य,* (2012) 4 एससीसी 289 में दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया, जिसमें इस न्यायालय ने *रामनरेश एवं अन्य बनाम छत्तीसगढ़ राज्य* (ऊपर उद्धृत) में दिए गए निर्णय का अनुसरण करते हुए आगे निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

"38. सर्वप्रथम, इस न्यायालय को न केवल यह जांचना है कि क्या वर्तमान मामला 'दुर्लभ से दुर्लभतम' मामलों की श्रेणी में आता है, बल्कि यह भी कि क्या वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में मृत्युदंड के अतिरिक्त कोई अन्य सजा अपर्याप्त होगी।

39. हम पहले ही अपीलकर्ता को अपने तीन बच्चों और पत्नी की हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत अपराध का दोषी पाया है। यह सब क्षणिक आवेग में हुआ, लेकिन निश्चित रूप से, घटना कुछ समय तक चली होगी, जिस अवधि के दौरान मृतक आराधना को जलने की चोटों के साथ-साथ गले पर घातक चोट भी लगी। तीनों बच्चों को मृतक आराधना के समान ही चाकू से चोटें आईं। लेकिन एक परिस्थिति जिसे इस न्यायालय द्वारा अनदेखा नहीं किया जा सकता, वह यह है कि अभियोजन पक्ष के गवाहों

ने स्पष्ट रूप से कहा है कि पड़ोसी लीलाधर तिवारी (अभियोजन साक्षी 10) से बात करने के कारण दंपत्ति के बीच अनबन थी। भले ही अभियुक्त द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत दिए गए उस बयान को कुछ महत्व दिया जाए जिसमें उसने कहा था कि उसने मृतक और अभियोजन साक्षी 10 को अभियोजन साक्षी 10 के घर में आपत्तिजनक स्थिति में देखा था, यह भी अभियोजन के उस आरोप का समर्थन करता है कि अभियोजन साक्षी 10 के कारण पति-पत्नी के बीच अनबन थी। प्राथमिकी (पृष्ठ-27) में भी यह स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होता है कि अभियुक्त ने अपनी पत्नी को अभियोजन साक्षी 10 से बात करने से मना किया था, लेकिन ऐसी चेतावनी के बावजूद वह बात करती रही और इसी कारण उसने बच्चों के साथ अपनी पत्नी की हत्या कर दी।"

30. मृत्युदंड देने के लिए इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मानदंडों पर हम अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता से सहमत हैं। इस मामले पर और अधिक विस्तार से विचार-विमर्श करने के बजाय, हम अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, उनमें प्रतिपादित मानदंडों को यह निर्धारित करने के लिए लागू करेंगे कि क्या वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में आजीवन कारावास या वैकल्पिक रूप से मृत्युदंड न्यायोचित होगा। हम सबसे पहले गंभीरकारी परिस्थितियों का उल्लेख निम्नानुसार कर सकते हैं:-

(i) अभियुक्त-अपीलकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 364ए के तहत अपराध का दोषी पाया गया है। धारा 364ए को नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

"364ए. फिरौती आदि के लिए व्यपहरण — जो कोई किसी व्यक्ति का व्यपहरण या अपहरण करेगा या ऐसे व्यपहरण या अपहरण के पश्चात उस व्यक्ति को

निरोध में रखेगा और ऐसे व्यक्ति को मृत्यु या उपहति कारित करने की धमकी देगा, या अपने आचरण से ऐसी युक्तियुक्त आशंका पैदा करेगा कि ऐसे व्यक्ति को मृत्यु के घाट उतार दिया जाएगा या उसे उपहति कारित की जाएगी, या सरकार या किसी विदेशी राज्य या अंतर्राष्ट्रीय अंतर-सरकारी संगठन या किसी अन्य व्यक्ति को किसी कार्य को करने या करने से विरत रहने के लिए, या फिरौती देने के लिए विवश करने के प्रयोजन से ऐसे व्यक्ति को उपहति कारित करेगा या उसकी मृत्यु कारित करेगा, वह मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा और जुर्माने के लिए भी दायी होगा।"

उपरोक्त प्रावधान के अवलोकन से इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि मृत्यु कारित करने की धमकी के साथ फिरौती के लिए व्यपहरण के अपराध में मृत्युदंड की परिकल्पना की गई है। इसलिए, फिरौती के लिए अपहृत व्यक्ति की अभियुक्त द्वारा वास्तव में हत्या न किए जाने पर भी, यह प्रावधान मृत्युदंड का प्रावधान करता है। जहाँ तक वर्तमान मामले का संबंध है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि अभियुक्त-अपीलकर्ता को सुरेश का फिरौती के लिए व्यपहरण करने और वास्तव में उसकी हत्या करने का भी दोषी पाया गया है। अतः, ऐसी स्थिति में अभियुक्त-अपीलकर्ता के दोष (भारतीय दंड संहिता की धारा 364ए के तहत) को अत्यंत गंभीर प्रकृति का माना जाना चाहिए, जो इस अपराध के लिए निर्धारित कठोरतम दंड को न्यायोचित ठहराता है।

(ii) अभियुक्त-अपीलकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत हत्या के अपराध का भी दोषी पाया गया है। भारतीय दंड संहिता की धारा 302 भी हत्या के अपराध के लिए मृत्युदंड की परिकल्पना करती है। अतः यह स्पष्ट है कि

अभियुक्त-अपीलकर्ता दो जघन्य अपराधों का दोषी है, जो एक-दूसरे से स्वतंत्र रूप से भी मृत्युदंड का प्रावधान करते हैं।

(iii) अभियुक्त ने *7* वर्ष के बच्चे की हत्या की। मामले के तथ्य और परिस्थितियाँ पक्षकारों के बीच किसी भी पूर्व शत्रुता को नहीं दर्शाते हैं। यहाँ कोई घोर और अचानक उकसावा भी नहीं था, जिसने अभियुक्त को एक निर्दोष बच्चे की जान लेने के लिए विवश किया हो। ऐसी परिस्थितियों में एक बच्चे की हत्या, इस मामले को अत्यधिक दोषिता का मामला बनाती है।

(iv) एक बच्चे का व्यपहरण फिरौती वसूलने के मकसद से किया गया था। फिरौती का भुगतान न किए जाने के कारण एक नाबालिग बच्चे की हत्या कर दी गई। यह तथ्य दर्शाता है कि अभियुक्त के मन में मानव जीवन का कोई मूल्य नहीं था। यह परिस्थिति अत्यंत मानसिक विकृति को प्रदर्शित करती है जो मानवीय क्षमा के योग्य नहीं है।

(v) जिस तरीके से बच्चे की हत्या की गई, और अभियुक्त द्वारा जो दृष्टिकोण एवं पद्धति अपनाई गई, वह अभियुक्त के व्यवहार में अत्यंत जघन्य आपराधिक प्रवृत्तियों को उजागर करती है। बच्चे का पहले गला घोंटकर हत्या की गई, फिर बच्चे के शव को एक बोरी में बांधा गया, और अंत में उस बोरी को पानी की टंकी में फेंक दिया गया। यह सब बहुत ही सोच-विचारकर और सुनियोजित तरीके से किया गया था। अभियुक्त का यह रवैया उच्चतम स्तर की क्रूर मानसिकता को दर्शाता है।

(vi) उपरोक्त सभी गंभीरकारी परिस्थितियों पर इस तथ्य की पृष्ठभूमि में विचार किया जाना चाहिए कि बच्चा अभियुक्त-अपीलकर्ता का परिचित था। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत अभियुक्त के परीक्षण के दौरान, अभियुक्त ने स्वीकार

किया कि जब भी बच्चा अपनी माँ के साथ अपने पैतृक गाँव जाता था, तो वह बच्चे को देखता था। इसके अतिरिक्त, अभिवचनों में यह स्वीकार किया गया है कि जब बच्चे की माँ अपने बेटे के साथ अपने पैतृक स्थान पर आती-जाती थी, तब अभियुक्त की बच्चे से जान-पहचान हो गई थी। अतः हत्या किसी अजनबी की नहीं, बल्कि एक ऐसे बच्चे की की गई थी जिससे अभियुक्त परिचित था। अभियुक्त-अपीलकर्ता का यह आचरण इस मामले के तथ्यों को असामान्य और जघन्य श्रेणी में रखता है।

(vii) फिरौती के लिए उस विशेष बच्चे के व्यपहरण का चयन सुनियोजित और सचेत मंशा से प्रेरित था। मृतक के माता-पिता के चार बच्चे थे - तीन बेटियाँ और एक बेटा। इकलौते बेटे का व्यपहरण उसके माता-पिता के मन में अत्यधिक भय पैदा करने के लिए था। एकमात्र पुत्र की जानबूझकर हत्या करने के मृतक के माता-पिता के लिए गंभीर परिणाम हैं। अपने इकलौते बेटे को खोने से माता-पिता को होने वाली पीड़ा अथाह है, जो परिवार के वंश को आगे बढ़ाता और जिससे उनके बुढ़ापे में सहारा बनने की अपेक्षा की जाती थी। पीड़ित पक्ष को पहुँचाया गया यह अत्यधिक कष्ट निश्चित रूप से गंभीरकारी परिस्थितियों में वृद्धि करता है।

31. उपरोक्त गंभीरकारी परिस्थितियों के विरुद्ध, अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता हमें एक भी शमनकारी परिस्थिति बताने में असमर्थ रहे। इस प्रकार देखे जाने पर, अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, उनमें इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मानदंडों के आधार पर भी, हमारे पास उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलकर्ता पर अधिरोपित मृत्युदंड की पुष्टि करने के अलावा और कोई विकल्प नहीं है। वास्तव में, हमें इस न्यायालय द्वारा *विक्रम सिंह एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य,* (2010) 3 एससीसी 56 में दिए गए निर्णय के आलोक में उपरोक्त निष्कर्ष दर्ज करना पड़ रहा है,

जिसमें समान परिस्थितियों में (निश्चित रूप से, वर्तमान मामले की परिस्थितियाँ उक्त मामले की तुलना में कहीं अधिक गंभीर हैं), इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए मृत्युदंड को बरकरार रखा था।

32. उपरोक्त के आलोक में, हमें उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश में, चाहे गुण-दोषों के आधार पर हो या सजा की मात्रा के आधार पर, हस्तक्षेप करने का कोई भी औचित्य नहीं मिलता है।

33. खारिज।

के.के.टी. अपीलें खारिज।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।